श्री क्षेत्र कनकगिरी

मानव धर्म प्रकाश

[दशलक्षण धर्म महापर्व विवेचना]

लेखक व संपादक - आदिसागर वर्णी
श्री क्षेत्र कनकगिरी जैन मठ

प्रकाशक - कनकगिरी प्रकाशन,
श्री क्षेत्र कनकगिरी (मलेयूरु) ता. चामराजनगर (मैसूर)

दशलक्षण धर्म का प्रथम अंग है -

उत्तम क्षमा

रोसेण माहाधम्मो णासिज्ज तणं च अग्गिणा सव्वे।
पावं च करिज्ज महं बहुगं पि णरेण खमिदव्वं ।।

जिस प्रकार अग्नि के एक चिनगारी से ढेर सारा तृण नष्ट होजाता है उसी प्रकार दुर्लभ से प्राप्त हुआ धर्म क्रोध के निमित्त से क्षणभर मे नष्ट होजाता है। तथा अनेक भवों तक दुःख देने वाला पाप का बन्ध कराता है। इस लिए सज्जन को चाहिए कि वे हमेशा अपने चित्तमे क्षमा भाव धारण करे।।

यह क्रोधरूपी अग्नि आज्ञान रूपी कष्ट से उत्पन्त होती है, और वह अपमानरूपी वायु से भडंक उठती हैं। कठोर वचन ही उस के चिनगरियां है। हिंसा - रक्त पात उसकी लाल लाल लपटें हैं। और अत्यन्त उग्र वैर का होना उसका धूम है। एसे भयानक क्रोध को शान्त करने के लिए केवल क्षमा को नहीं किन्तु "उत्तम" क्षमा धारण करना परमावश्यक है। जैसा कि हर मनुष्य बजार मे कुछ खरीदि करने जाता है तो उसकी भावना उत्तम से उत्तम वस्तु खरीद ने की होती है। हर व्यक्ति उत्तम वस्तु का उपभोग करके आनन्द लूटना चाहता है। उसी प्रकार यदि हम आध्यात्मिक आनन्द उठाना चाहते है। तो क्षमा धर्म को "उत्तम" विशेषण के साथ उपयोग करने के लिए हमारे आचार्य / पूज्य पुरुषोंने कहा है।

"उत्तम क्षमा -मार्दवार्जव -शौच -सत्य -संयम -तपस्त्यागाकिंचन्य -ब्रह्मचर्याणि- धर्मः " (तत्वार्थ सूत्र, 9/6) = हमरी / क्षमा - सरलता - निर्लोभ - सत्य - संयम -तथा -त्याग - आकिंचन्य -तथा ब्रह्मचर्य, ये दसों

ही यदि स्वार्थ रहित और सम्यक्त्व पूर्वक हों तो ही उत्तम कहलायेंगे, एसे उत्तम क्षमा आदि को ही यहां पर धर्म के नाम से कहा जा रहा है। ये दश धर्म आत्मा के ही गुण होने से प्रत्येक जीव में उसका अस्तित्व हमेशा पाया जाता है। किन्तु ये स्वाभाविक गुण, पर के निमित्त से और अज्ञान के कारण से संसारी जीवों में विभवरूप परिणमते है। जैसे - अग्नि के निमित्त पाकर जल अपनी शीतल स्वभाव को छोड कर उष्ण रूप में परिणमन करता है। और जब अग्नि का संयोग जल से अलग किया जाता है तब वह कुछ ही समय मे अपने शीतल स्वभाव को प्राप्त हो जाता है। उसी प्रकार यह आत्मा ज्ञानावरणादि आठ कर्मों के संयोग वश से अपने उत्तम क्षमादि दशधर्मों को छोडकर क्रोध -मान -माया -लोभादिरुप होकर परिणमन करता रहता है।

इन क्रोध -मान -माया व लोभ के विषय में न केवल धर्म शास्त्रों मे ही नहीं अपितु ज्योतिष शासत्र व आयुर्वेद शास्त्र मे भी अपने ढंग से वर्णन किया है। आयुर्वेद शास्त्र के एक प्रोफेसर ने अपनी पुस्तक मे लिखा है कि - "पित्तप्रकृतिवाला व्यक्ति क्रोध स्वभाव का, वातप्रकृतिवाला व्यक्ति अधिक मान कषायी, कफ प्रकृतिवाला व्यक्ति अधिक लोभी और जहां तीनो की विषमता होगी वहां मायाचारी अधिक होगी यह आयुर्वेद शास्त्रका विचार एक स्यूल दृष्टिकोन से कहागया है। ज्योतिष शास्त्र का कहना है कि - क्रोध की अधिकता मंगलग्रह की प्रभाव से, मान कषाय की अधिकता सूर्यग्रह की प्रभावसे, शनिग्रह की प्रभाव से मायोचार की अधिकता, और राहुग्रह के प्रभावसे लोभ की अधिकता हुआ करती है। यह भी एक स्यूल दृष्टिकोन से ही कहा जा सकता है।

किन्तु जैनाचार्यो का कहना कुछ इससे भिन्न और सूक्ष्म दृष्टिकोन रहा है। वे कहते है - मिथ्यात्व - गुणस्थानवर्ती जीवों के ही विशेतः क्रोध - मान - माया और लोभ की प्रवृती अधिक हुआ करती है। अनन्तानुबन्धी

क्रोध -मान-माया-और लोभ के कारण यह जीव अनन्त काल से इस संसार बन्धन मे पडा हुआ है, अपने ही अज्ञान के कारण पर वस्तुओं के प्राति मोह -ममता करता रहता है, इसी कारण वश अपना अनन्त सुख और शक्ति को खो बैठा है।

यहां पर यह शंका हो जाती है कि अनंत सुख और शक्ति वाली यह आत्मा कैसे बन्धन मे पड गया? हम कैसे माने कि आत्मा अनंत शक्ति शाली है? "इस प्रश्न के उत्तरमें आचार्य कहते है कि" तीन लोक के अन्दर- नर - नारकादि जितने भी पर्याय हैं उन अनंत पर्यायों में जन्म-मरण रूप परिभ्रमण करते रहने पर भी इस आत्मा की वह देखने - जानने रूप चैतन्य शक्ति नष्ट न होकर आजतक शाश्वत ही रही है। इसी से यह सिद्ध होता है की आत्म-वस्तु अनंत शक्ति शाली है। यदि यह आत्मा अनंत शक्ति शाली नहीं होता तो इन अनेक -अनंत पर्यायों में उसका चैतन्य शक्ति नष्ट हो जाती। नर-नारकादि पंचपरावर्तनरूप इतने परिभ्रमण के पश्चात् भी अपना -अस्तित्व यथावत् बनाये रखा है।

जितने अधिक धर्मग्रन्थ भारत में रचे गये, उतने अधिक अन्यत्र कहीं नहीं रचे गये। अन्य देशों में केवल एक -एक ग्रन्थ ही रचे गये। जब कोई पुत्र कुसंगति में पडकर अधिक बिगड जाता है तो पिता उसे बार -बार, तरह -तरह से समझाते हैं। यही बात इस दशलक्षण धर्म के विषय में भी लागू होता है। आचार्य गुरुदेव अखंड एक धर्म को दशधर्म कहकर दस तरह से बार-बार समझनेकी सत्प्रयास किया है।

"क्रोधाभावे क्षमा" क्षमा अर्थात् क्रोधका सर्वथा अभाव। इस क्षमा भाव की प्राप्ति शास्त्र ग्रन्थों से नही होगी। इसे शास्त्रों में नही खोजना। शास्त्र तो दर्पण के समान है। दर्पण मे मुख पर लगा कालुष्य/दाग दिख जाता है, पर उस को मिटाना स्वयं को होता है। दर्पण के सामने कालुष्य को "यह दाग' है "-ऐसा कहने से वह दाग नही मिटता। मिटाने का

उपक्रम करने से मिटता है। धर्म की प्रप्ति मे शास्त्र हमारेलिए साधन है। उसका खोज आत्मा मे अत्मा के द्वारा होगा। हमारे महा पुरुष जितने भी हुए है। वे धर्म को शास्त्रो मे नही खोजा किन्तु गिरि कन्धरादि निर्जन वनोमे रहकर अपनी आत्मा के अंदर खोज निकाला। बुद्ध -माहावीर - राम -रहीम आदि सभी महापुरुषों ने अपनी ही आत्मा में खोजा - देवात्वानुभव किया फिर बाद में अपने शिष्यों को बताया।

एक बार गुरु और शिष्य दोनो यात्रा के लिए निकले, चलते चलते शाम हो गई। ध्यान -सामाइक समय होगया। एक वृक्ष के नीचे बैठ गये। चारो और भयानक जंगल था। वहां ध्यान में बैठे ही थे कि -शिष्य की दृष्टि उस घने जंगल मे से आते हुए एक सिंह पर पडी। शिष्य घबरागया कि अब-बचना संभव नही है। गुरू जी को पुकारकर कहा भी, किन्तु गुरु परमात्मा के ध्यान मे तल्लीन थे। शिष्य चुप चाप उठा और धीरे से पेड पर चढकर ऊँचे जा बैठा। और देखता रहा कि -वह सिंह सीदा गुरु के निकट आया इधर उधर देखा -सूंघा चक्कर भी लगया, लेकिन कुछ भी किये बिना वापस चला गया। शिष्य तो थर थर कांपने लगा था, पता नही क्या होने वाला है। जब सिंह वहां से दूर चला गया, तब दीर्घ श्वास लेकर वह नीचे उतरा और गुरुजी के चरणो मे प्रणाम कर बैठ गया।

थोडी देर बाद जब गुरु जी ध्यान से उठ कर शिष्य से कहा अब चलो। यात्रा बहुत बाकी है। तब शिष्य आश्चर्य हो कर कहने लगा कि -गुरुजी आज तो हम दोनों का बडा ही भाग्योदय था। बच गये। एक सिंह आया था और बिलकुल आपके पास तक आया था। आप को सूंघ भी लिया था। क्या आपको मालूम नही है? गुरु ने कहा, नहीं। मुझे नही मालूम। अब तो शिष्य और अचंबे मे पडगया और वह श्रद्धा से भरकर गुरु के पैरो में गिर पडा, कहने लगा - धन्य है गुरुवर आपकी महिमा,

आपका धैर्य, आपकी -दृढता। गुरुजी ने अपनी प्रशंसा सुनकर मानों अनसुनी कर दी और कहा चलो -चलो अबी यात्रा करना बहुत बाकी है। दोनो फिर यात्रा पर बढ गये। थोडी दूर चलने के उपरान्त एक घाटी में से गुजरते समय कुछ मधुमक्खियां आने लगीं और गुरुजी को एक दो स्थान पर काट लिया। गुरुजी तुरंत पीडा से कराहने लगे और आगे बढ नहीं पाये वही बैठ गये। कहने लगे अब चलना मेरेसे नही होगा।

शिष्य बढी दुविधा में पढ गया कि -आखिर बात क्या है? उसने तुरंत पूछा, गुरुजी, अभी तो सिंहके आजाने पर आप बिलकुल विचलित नही हुए थे और अब इतनी छोटी सी मधुमक्खियों से विचलित कैसे होगये। कुछ समझ मे नहीं आया। गुरुजी मुस्कुराये और बोले -उस समय जब सिंह आया था तब मेरे साथ -मेरे मन में केवल भगवान थे, मै उन्ही में लीन था। विचलित या भयभीत होने की बात ही नही थी, लेकिन -अब तो तुम मेरे साथ हो, अतः बहिरंग दृष्टि मे भय होना स्वाभाविक है। इसी को सत् संगती का फल कहा जाता है।

बात आप के समझ में आ रही होगी। यदि धर्म का सेवन हम वाह्य विषयों का विमोचन किये बिना करेंगे तो उसका सही स्वाद (अनुभव) नही आयेगा, शान्ति और तृप्ति नही मिलेगी। कम से कम धर्म को अंगी कार करने से पहले विषयों के प्रति राग भाव तो गौण होना ही चाहिए। किसी भी देशकी संस्कृति, धर्म के बिना महान नही बन सकता। अतः उत्तम क्षमादि दश धर्मों का पालन करना भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का देन विशेष अधिक है। भगवान वृषभ देव के पुत्र भरत चक्रवर्ती और बाहुबली जैसे महान् अहिंसक -आदर्श राज पुरुष हुए। जिन के जीवन चरित्र से हमे दशधर्मो का बोध प्राप्त होता है। हजारों वर्षो से आज भी हमे दशधर्मो का मौन उपदेश देते हुए विश्वविख्यात श्री गोमटेश्वर भाहुबली के रूपमे श्रवणबेलगोल में प्रत्यक्ष में हमारे सामने खडे है।

उनके शरीर में लिपटी हुई वह माधवी लता ही दश दर्मों का चिन्ह है। जो भी विद्वान -विदेशी पर्यटक इसे प्रथम बार देखेगा वह अवश्य ही कुछ समयतक बाह्य प्रपंच को और अपने आप को भी भूलकर उस वीतराग मुद्रा के नीरीक्षण मे, उस दश धर्म के स्वरुपावालोकन में मग्न हो जाता है।

बात यह है कि वीतरागरूप दश धर्म को सुनने से पुर्व उसके योग्य पात्रता बनाना भी आवश्यक है। जैसे सिंहनी का दूध स्वर्ण पात्र मे ही रुकता है, उसी प्रकार वीतराग धर्म का श्रवण करके उसे धारण करने की क्षमता भी सभी में नही हुआ करती। उस के लिए भावों की भूमि में थोडा सा दया व विरक्ति का भीगापन -आद्रता का होना आत्यन्त आवश्यक है। जिससे वितरागता के प्रति आस्था और उत्साह जागृत हो सके। चारों तरफ भोगोप भोग की सामग्री होते हुए भी इस काया के द्वारा उस माया को गौण करके भीतरी आत्मा को पहचानने और शरीर से भिन्न उसे देखने के लिए दश लक्षण धर्म को सुनना मात्र ही पर्याप्त नही है, उसे प्राप्त करना भी अनिवार्य है।

जीवन के एक एक क्षण उत्तम क्षमा के साथ निकले। एक एक क्षण मार्दव के साथ विनय अनुनय के साथ निकले। एक एक सांस हमरी वक्रता के अभाव में चले। ऋजुता और शुचिता के साथ चले, पूरा जीवन ही दश धर्म मय हो जाये। दश धर्म की व्याख्या तो कोई भी सुन सकता है, पढ सकता है, लेकिन धर्म का वास्तविक दर्शन और अनुभव तो सर्व संग त्याग में ही यनि अपरिग्रही को ही संभव है। उसका प्रतिफल रुप मुक्ति भी हमेशा अपरिग्रह के साथ संभव है। जो व्यक्ति दश धर्म के श्रवण और दर्शन के माध्यम से एक समय के लिए भी जीवन मे धर्म के प्रति संकल्पित होता है, उत्तम क्षमा धारण करने का भाव जगृत करता है, तो उसका वह भाव ही उसके लिए भुमिका का काम अवश्य करेगा।

रावण ने एक बार मुनि महाराज के मुख से धर्म श्रवण किया। उसके साथी भी साथ में थे। जब अंत में सभी ने एक -एक करके मुनि महाराज से कुछ न कुछ व्रत लिए तब चारण ऋद्धि धारी उन मुनिराज ने रावण को कहा कि हे त्रिखंडाधिपति रावण तुम तो महान बलशाली हो। कौन सा व्रत लते हो? ले लो। तब रावण ने कहा कि महाराज आज मुझे अपने से बढकर कोई कमजोर/बलहीन नहीं लग रहा है। आप से अपनी कमज़ोरी कैसे कहूँ ? एक छोटा सा व्रत भी मेरे लिए पालन करना कठिन लगता है। इतना ही कर सकता हूँ कि, जो स्त्री मुझे नही चाहेगी उसके साथ संबंध के लिए मै जबरदस्ती से बाध्य नहीं करूंगा, यही मेरा व्रत रहेगा।

रावण ने सोचा था कि ऐसी कोई स्त्री नहीं होगी दुनियामें, जो मुझे नहीं चाहेगी। पर यह बात सारी दुनिया को भी ज्ञात है कि इस एक छोटासा व्रतने उसे बहुत अच्छी शिक्षा दिलाई। सीता का हरण तो कर लिया लेकिन सीता को बाध्य नहीं कर सका। उसने जीवन को थोडा बहुत संस्कारित तो अवश्य किया। वैसे ही हमें भी व्रतों को अंगीकार करके स्वयं को संस्कारित करना चाहिए और व्रतियों को देख कर व्रतों के प्रति आकृष्ट होना चाहिए। सभी को व्रत -नियम -संयम के प्रति प्रोत्साहित भी करना -कराना चाहिए।

बन्धुओं ! यदि एक बार शान्ति के साथ आप विषयों को गौण करके थोडा सा विचार करें तो अपने आप ज्ञान होने लग जायेगा कि हमारा धर्म क्या है? हमारा स्वभाव क्या है? हमें विषय -कषायों की संगती नहीं करना है। हमें करना है विरागी देव गुरु -शस्त्र की संगती, ताकि हमें धर्म का वास्तविक स्वरुप समझ मे आ सके।

हमे क्षमा की जानकारी रखने, उस पर श्रद्धा रखने और अपने शक्ति के अनुसार क्षमाधर्म को जीवन मे उतार ने का प्रयत्न करना